I J R S S I S, Vol. VII, Issue (1), January 2019 : 274-280 ISSN 2347 – 8268

INTERN ATIONAL JOURNAL OF RESEARCHES IN SOCIAL SCIENCES AND INFORMATION STUDIES
© VISHWASHANTI MULTIPURPOSE SOCIETY (Global Peace Multipurpose Society) R. No.659/13(N)
www.vmsindia.org

बौद्ध संघप्रणाली का भारतीय लोकतंत्र पर प्रभाव

डॉ. संगीता मेश्राम
सहयोगी प्राध्यापिका इतिहास विभाग
राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज नागपूर विश्वविद्यालय, नागपूर
meshramsangita33@gmail.com

सारांष :

भारतीय लोकतंत्र की परंपरा को विशद करने हेतु प्रस्तुत शोधनिबंध का है। यह एक आम धारना है, की भारत की वर्तमान संसदीय प्रणाली, घटना निर्मितीके वक्त विश्वविख्यात देशोंकी प्रशासनिक प्रणाली से प्रभावित होकर अपनायी गई है, जब की यह शोधनिबंध भारतीय लोकतंत्र का इतिहास कितना प्राचीन है, उसकी बात करता है। भारतीय लोकतंत्र और प्राचीन बौद्धसंघ की कार्यप्रणाली की समानता की तथा उनके विशेषताओं की चर्चा करता है। अधिवेषन, विभिन्न मुद्दोंकीअधिवेशन में चर्चा का प्रावधान, चर्चा की तथा निर्णय लेने की प्रणालीयोंकी चर्चा भी प्रस्तुत शोधपत्रकरता है।

कीवर्डस् :

म्हासंमता सार्वभौमसत्ता, लोकतंत्रात्मक शासनसिद्धान्त, सात अपरिहाणीसुक्त, गणपुर्ती, संथागार, तिनवत्थारक, उद्वाहिका, शलाका, गुढक, सकर्णजल्पक, निवृत्तक

प्रस्तावना

आज के आधुनिक भारतीय लोकतंत्र की कुछ कुछ बातें प्राचीन बौद्ध संघ से किस प्रकार मेल खाती है, और प्राचीन बौद्ध संघ के नियम आज किस तरह से आदर्शवत है तथा प्रासंगिक है। इस बात को स्पष्ट करने हेतू प्रस्तुत शोध निबंध का प्रपंच किया गया है। दीर्घ निकाय दक्षिणी बौद्धों का धर्मग्रंथ है और महावत्थु उत्तरी बौद्धो का धर्मग्रंथ है। इन दोनों ग्रंथो में राज्य की उत्पत्ती के बारे से समान सिद्धांतोका प्रतिपादन मिलता है ।[1]

पहले सतयुग था। लोक सुखी एवं आनंदी थे। शीघ्रही दुष्ट प्रवृत्तीयाँ जागृत हुयी। इसी वजह से लोगों ने अपने धान्य के खेत अलग अलग हिस्सो में विभक्त करके अलग अलग लोगों को दे दिये। पर जब इन्सान लालची हुआ, उसने खुद के खेत की रखवाली शुरू की पर साथ में दुसरे के खेत काटना भी शुरू किया। इन परिस्थितीयों से खुद को बचाने के लिए लोक एकत्रित हुए। अपनें में से एक जो सुन्दर, प्रतिभावान तथा योग्य था, उसे कहा की तुम जाओ, जो दण्ड अथवा निष्कर्ष के योग्य हो उनके साथ वैसा

INTERN ATIONAL JOURNAL OF RESEARCHES IN SOCIAL SCIENCES AND INFORMATION STUDIES
© VISHWASHANTI MULTIPURPOSE SOCIETY (Global Peace Multipurpose Society) R. No.659/13(N)
www.vmsindia.org

करो और बदले में हम तुम्हे धान्य का भाग देंगे।' इसी प्रक्रियासे (जनता द्वारा जो श्रेष्ठ चूना गया) महाजन – सामन्त या महासम्मंत, खेतानं पतीति (खेतों का स्वामी) खत्तिय या क्षत्रिय तथा धम्मेन प्रजारंजेतीति (धर्म के द्वारा प्रजा का रंजन करने वाला) 'राजन' कहा गया है।[2]

तात्पर्य बौद्ध धर्म ग्रंथो से पता चलता है की लोगों के हितों की रक्षा हेतु राजपद का निर्माण हुआ है। राजा कोई ईश्वरी दूत या प्रतिनिधी ना हो कर जनमानस का ही प्रतिनिधी था, और उसकी पद पर नियुक्ती नहीं हुई वह जनमानस की इच्छा और संमती से निर्वाचित होता था। अर्थात वह जनता को जिम्मेदार है। उसका कर्तव्य जनता की हितों की रक्षा करना है और उसका प्रमुख कार्य लोकानुरंजन है। राजा के इच्छा से प्रशासन नहीं चलेगा बल्कि प्रजा के इच्छा से चलेगा क्यों की अंतिम सत्ता प्रजा में निहित है। प्रजा की तरफ से प्रातिनिधिक रूप में राजा को कार्य करना है। अर्थात अंतिम सार्वभौम सत्ता प्रजा में निहित है। इसी आशय का विवरण महावत्थू में भी मिलता है। और इनकी विशेषता ये है कि, इनमें राजा के कर्तव्योंपर ही बल दिया है ।

इस विवेचन से यह स्पष्ट है कि सतयुग समाप्ती पर सर्वत्र जो अराजकता थी उसको दूर करने के लिए राजा की आवश्यकता पडी। राजा की नियुक्ती जब हुई तब लोगों ने अपने मे जो श्रेष्ठ था उसे राजा चुना। तथा उसके साथ समझौता किया। यहाँ राजा की नियुक्ती का आधार निर्वाचित होना या चुनाव होना, उससे समझौता करना यह लोकतंत्रात्मक शासन सिद्धांत को पोषक है।

बौद्ध संघ की कार्य पद्धती का विवरण पालि 'महावग्ग'[4] एवं 'चुल्लवग्ग'[5] मे मिलता है। भगवान बुद्ध ने वज्जि संघ के अजय रहने के लिए जो सात अपरिहाणी धम्म बताए थे। [6] उसमें से कुछ उन्होंने आवश्यक सुधारणाओं के साथ बौद्ध संघ को लागू किये थे। महापरिणिब्बान सूत्त इस बारे में जानकारी देता है। भगवान बुद्ध ने भिक्खुओं के संघ को अक्षय बनाए रखने के लिए सात अपरिहानिय नियम बनाए थे। वो निम्मलिखित है।

1. नियत समयपर सदस्यों की पूर्ण उपस्थिती के साथ संघ सभा में अधिवेशन कराना ।
2. एकमत के समग्र भाव से संघ में उपस्थित होना। एकमत से अधिवेशन समाप्त करना और एकमत से संघ के कर्तव्य करना।
3. जो स्वीकृत नही है, उसका स्वीकार नहीं करना, जो स्वीकृत है, उसका समुच्छेद नही करना और संघ के स्वीकृत पूर्व निश्चयों को लेकर उनके अनुसार कार्य करना।

INTERN ATIONAL JOURNAL OF RESEARCHES IN SOCIAL SCIENCES AND INFORMATION STUDIES
© VISHWASHANTI MULTIPURPOSE SOCIETY (Global Peace Multipurpose Society) R. No.659/13(N)
www.vmsindia.org

4. संघ के जो संघपित्तर या वृद्ध है और जो संघ परिनायक है, उनका सत्कार करना, गौरव करना, सन्मान करना और उनके वचन सुनकर उन्हे मानना।
5. पुनः पुनः उत्पन्न होने वाली तृष्णाओं को वश में रखना।
6. मात्र वन की कुटियों में वास करने की इच्छा रखना।
7. संघ में प्रविष्ट ब्रम्हचारियों के साथ सुख से निवास करने का प्रयत्न करना ।[7]

संघो के अधिवेशन उद्यानों में या संथागारो में होते थे। सभाभवन की कल्पना का साकार स्वरूप भगवान बुद्ध ने कपिल वस्तु में संथागार के नाम से किया था। इसी का आज विकसित रूप एसेम्बली हॉल के रूप में हमे दिखता है। उद्यानों या संथागारो में जहाँ दस वर्ष का अनुभवी भिक्षु जिसे' आसन प्रज्ञापक' कहते थे, वो क्रम से आसन लगवाते थे।[8] अधिवेशन के लिए भिक्षुओं की उपस्थिती की संख्यापर भी विचार होता था।[9]बौद्ध संघ में उपसंपादना देने के लिए दस से कम कोरम वाले गण से उपसंपदा नहीं सुननी चाहिए ऐसा नियम था।[10] भिक्षू संघ में कोरम का नियम था। संघ बैठक में कमसे कम २० भिक्षुओं की उपस्थिती आवश्यक थी।[11] संघ के अध्यक्ष को' विनयधर' कहते थे। संघपुरक/ गणपुर्ति संख्या में भिक्षुणी/सिक्खमाना/सामणेर, दुसरे धर्मों के प्रतिनिधी या दुसरे जनपदो के व्यक्ति जिनके विरुद्ध संघ ने कोई कार्यवाही की हो संधपुरक संख्या में नही आते थे। संघपूर्ती की संख्या के अभाव में संघ वग्ग या व्यग्र कहलाता था। ऐसे संघ के निर्णय अमान्य होते थे। योग्य सदस्योंकी पुरी सभा को सम्मुखा कहते थे। जो सदस्य गणपूर्ती करते थे उन्हे गणपुरक कहा जाता था।[12]

अधिवेशन के चर्चा के विषयों के बारे में भी कुछ नियम थे जैसे की,

1. अधिवेशन में प्रस्ताव (ज्ञप्ति) के बिना विषय उपस्थित नही हो सकता था।[13]
2. उसके बाद प्रस्तावित विषय का वाचन होता था ।
3. मतभेद नहीं होने पर प्रस्ताव एकबार पढ़ा जाता था।
4. मतभेद होने पर तीन बार पढ़ा जाता था ।
5. प्रस्ताव पड़ने पर अगर कोई सदस्य मौन रहता था तो वह उसकी स्विकृती मानी जाती थी।[14]
6. स्वीकृत प्रस्ताव को संघकर्म कहा जाता था।
7. प्रस्ताव पर मतभेद होने पर प्रायः वाद – विवाद कलह हो जाता था।
8. ऐसें में मतभेद होने पर एकमत होने की युक्तियाँ की जाती थी। जो निम्नलिखित है।[15]

INTERN ATIONAL JOURNAL OF RESEARCHES IN SOCIAL SCIENCES AND INFORMATION STUDIES
© VISHWASHANTI MULTIPURPOSE SOCIETY (Global Peace Multipurpose Society) R. No.659/13(N)
www.vmsindia.org

(अ) तिनवत्थारक

सभी सदस्य एक निश्चित स्थानपर एकत्र होकर प्रत्येक दल के नेता से अपने विवाद सुलझाने को कहा जाता था।[16] इसमें प्रत्येक पक्ष के लोग इसविषय पर परस्पर विवाद त्याग कर अपना एक नेता चुन लेते थे।[17] नेता उस सभा के सम्मुख ही विषय पर वाद – विवाद करके निर्णय खोज लेते थे।

(ब) उब्बाहिक / उद्वाहिका –

तिनवत्थारक से अगर निर्णय न लगता हो तब उसे उब्बाहिका या उद्घाहिका नामक समिती के तरफ वह विवादित विषय सौंपा जाता था। इस सभा में आदर्श चरित्र की व्यक्तियोंको रखते थे जिनमे विषय के संबंध में विचार करने की विशेष योग्यता एवं क्षमता रहती थी। ये विद्वान होते थे। यह समिती अन्यत्र शांतीस्थल में जाकर विचार विमर्श करती थी।[18] अपेक्षित ये रहता की इन सदस्योंका किसी भी पक्ष से प्रत्यक्ष या परोक्ष सम्बंध ना हो।

(क) शलाका मतदान –

जब उदाहिका (उपसमिती) सभा भी निर्णय देने में असमर्थ होती थी तब बहुमत की पद्धती काम में लायी जाती थी। जिसे' येब्भुय्य सिकेन' कहा जाता था।[19]

ऐसा जो सदस्य जो पक्षपात, दोष, मोह और भय से रहित नही होता था, संघ के विशेष प्रस्ताव द्वारा मतदान अधिकारी या शलाका ग्राहक नियुक्त किया जाता था। शलाकाग्राहक नियुक्त करते हुए निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखा जाता था।

1. जो अपने रूचि के रास्ते न जाए ।
2. जो द्वेष के रास्ते न जाए।
3. जो मोह के रास्ते न जाए।
4. जो भय के रास्ते न जाए।
5. जो पहले से पकड़े हुऐ रास्ते न जाए ।[२०]

जो नियम से कार्य करे, निपक्षपाती हो, जो पक्षपाती नही, जो शक्तिशाली दल या व्यक्ति के दबाव में, भय में ना आएं, जिसकी सम्मती पहले से ही बनी न हो तभी शलाकाग्राहक नियुक्त किया जाना चाहिए

INTERN ATIONAL JOURNAL OF RESEARCHES IN SOCIAL SCIENCES AND INFORMATION STUDIES
© VISHWASHANTI MULTIPURPOSE SOCIETY (Global Peace Multipurpose Society) R. No.659/13(N)
www.vmsindia.org

ऐसा वर्तमान में लोकसभा के सभापती के चुनाव में भी मार्गदर्शन मिलता है। मतदान शलाका ग्रहण से होता था। ये शलाका से लकड़ी की और विभिन्न रंग की होती थी। मत देने के निम्न तीन प्रकार थे।

(१) गुढक –

जितने पक्ष होते थे उतने रंगोंकी शलाकाएं बनाई जाती थी। क्रम से भिक्षु मत देने आते थे। प्रत्येक को शलाकाग्राहक बताता था की, किस रंग की शलाका किस पक्ष की है। भिक्षु उसको जो पक्ष को मत देना होता था उसी रंग की शलाका उठाता था। शलाका उठा लेने पर शलाकाग्राहक उसको कहता था की तुमने कौनसी शलाका उठाई ये किसी दुसरे को ना कहना।[21]

(२) सकर्णजल्पक–

मत देने वाला भिक्षु अगर शलाकाग्राहक के कान में कह कर अपना मत प्रकट करे तो उसे सकर्णजल्पक विधी कहा जाता था।[22]

(३) विवृत्तक

खुले रूप में जो मत दिया जाता था उसे विवृत्तक कहते थे ।[23]

यहां एक और बहुत महत्त्वपुर्ण बात थी अगर कोई भिक्खू संघ के अधिवेशन में किसी कारणवश उपस्थित न हो सकें, तब उसकी सम्मति लिखितरूप में मांगी जाती थी ।[24]

आज के संदर्भ में हम इन सबका अगर अवलोकन करते है तो यह निष्कर्ष निकाल सकते है की आज भी आधुनिक लोकशाही प्रशासन प्रणाली के कुछ – कुछ नियमोंका ऐतिहासिक प्रारूप हमे बौद्धसंघ के प्रशासनिक ढांचे में दिखता है जैसे की सभापती चयन। आज भी किसी प्रस्ताव को सभागृह में उपस्थित करने के पहले विषयनियामक समिती से गुजरना होता है। उसके बाद उस सभा में चर्चा होती है तब वो कानून में परावर्तीत होता है। मतभेद की स्थिती तें मतदान होना इत्यादी समानताऐ दिखती है।

मूल्यांकन

अभी तक इस शोधनिबंध में जो चर्चा हुई है उसमें बौद्ध संघ प्रणालिका भारतीय लोकतंत्र पर का प्रभाव सिद्ध होता है। बौद्ध धर्म के साहित्य से राजा की उत्पत्ती तत्कालिन प्रजा ने अपने में से श्रेष्ठ कोई

INTERN ATIONAL JOURNAL OF RESEARCHES IN SOCIAL SCIENCES AND INFORMATION STUDIES
© VISHWASHANTI MULTIPURPOSE SOCIETY (Global Peace Multipurpose Society) R. No.659/13(N)
www.vmsindia.org

एक की की थी वो विधि निर्वाचन की थी। प्रजाने उससे जो कृषिउत्पादन का भाग देने की बात की वो भी लोकतंत्रात्मक शासनसिद्धांत को पोषक है। इतनाही नही राजा का कार्य लोकानुरंजन होना, प्रजा को जिम्मेदार होना, प्रजा में सर्वोभौम सत्ता अंतिमतः निहित होना यह सारी बाते लोकतंत्रात्मक प्रणाली को ही निर्देशित करती है। बौद्ध संघ की कार्यपद्धती उसके अधिवेशन तथा नियम बनाने की विधी, मतभेद की स्थिती में समस्यापूर्ती के लिए किये जाने वाले पर्यायी उपाय, जैसे की वादविवाद या उपसमिती बनाना या मतदान करना आज की प्रक्रिया के समानही है जो स्वतंत्र भारत के लोकशाही शासन में की जाती है। अधिवेशन तब संथागारों में होते थे, बैठने की व्यवस्था विशिष्ट क्रम मे होती थी। गणपुर्ती की पद्धती का होना, मतदान अधिकारी का होना, इसी बात की तरफ संकेत करते है की, यही लोकतंत्रिय प्रणाली हमारी परंपरा है। भिक्षुणियों को गणपूरक न समझा जाना इस बात को स्पष्ट करता है की, बौद्ध संघ में स्त्रियों को प्रवेश जरुर मिला पर उनको पुरुषों के बराबर का स्थान संघ में नही दिया गयाबौद्धसंघ की इस कार्यविधी का अनुशिलन करने पर यह हो जाता है कि संघ एक अत्यंत उत्तम तथा विकसित संस्था थी कार्यविधी के नियमोंकी बारीकीयों पर भी उसमे ध्यान दिया गया था। तात्पर्य भगवान बुद्धने जो संघप्रणाली को विकसित किया वह कालातीत है ।

संदर्भ सूची

1. सहाय, डॉ.शिवस्वरूप, 'प्राचीन भारतीय राज्य और धर्म, स्टुडेन्टस् फ्रेन्डस्, इलाहाबाद, 2005, पृ.9
2. सांस्कृतायन राहुल, जगदीश कश्यप (अनु.) 'दिघनिकाय', सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृ. 372–75.
3. वही, पृ 375
4. सांस्कृतायन राहूल (अनु.)'विनयपिटक', Corporate Body of the Buddha Education Foundation, Taiwan, p. 75–338.
5. वही, पृ 339–558
6. सांस्कृतायन राहूल, जगदिश काश्यप (अनु .)' महापरिनिब्बान सुत्त' सम्यक प्रकाशन, द्वितीय संस्करण, नई दिल्ली 2010, पृ. 16–20.
7. विद्यालंकार, सत्यकेतू,' प्राचीन भारत की शासन संस्थाएं और राजनीतिक विचार, श्री सरस्वती सदन, छटा संस्करण, नई दिल्ली, 1999, पृ.102–03.
8. वही, पृ. 103.
9. कपूर शैलेन्द्रनाथ – प्राचीन भारतीय राजतंत्र, विश्व प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995,पृ. 67
10. सांस्कृतायन विनयपिटक, पृ. 108
11. विद्यालंकार, पृ. 105
12. कपूर, पृ. 67–68.
13. विद्यालंकार, पृ. 104

INTERN ATIONAL JOURNAL OF RESEARCHES IN SOCIAL SCIENCES AND INFORMATION STUDIES
© VISHWASHANTI MULTIPURPOSE SOCIETY (Global Peace Multipurpose Society) R. No.659/13(N)
www.vmsindia.org

14. सांस्कृतायन, विनयपिटक, पृ. 354
15. कपूर, पृ. 68
16. वही
17. वही और सहाय, पृ. 63
18. सहाय पृ. 63
19. कपूर पृ. 68
20. विद्यालंकार, पृ. 105
21. वही, पृ. 106